International Research Journal of Human Resources and Social Sciences
Vol. 4, Issue 1, January 2017 Impact Factor- 5.414
ISSN(O): (2349-4085) ISSN(P): (2394-4218)
© Associated Asia Research Foundation (AARF) Publication
Website: www.aarf.asia Email : editor@aarf.asia , editoraarf@gmail.com

आर्य समाज और भारत का नवजागरण

डॉ0 विभा गुप्ता

एसोसिएट प्रौफेसर हेल्थ एवं फिजिकल एजुकेशन

एवं कार्यवाहक प्राचार्या

डी.ए.वी. कॉलेज फॉर गर्ल्ज़, यमुना नगर

आर्य समाज एक हिन्दू सुधार आंदोलन है जिसकी स्थापना स्वामी दयानन्द सरस्वती ने १८७५ में बंबई में मथुरा के स्वामी विरजानंद की प्रेरणा से की थी।ख्1, यह आंदोलन पाश्चात्य प्रभावों की प्रतिक्रिया स्वरूप हिंदू धर्म में सुधार के लिए प्रारंभ हुआ था। आर्य समाज में शुद्ध वैदिक परम्परा में विश्वास करते थे तथा मूर्ति पूजा, अवतारवाद, बलि, झूठे कर्मकाण्ड व अंधविश्वासों को अस्वीकार करते थे। इसमें छुआछूत व जातिगत भेदभाव का विरोध किया तथा स्त्रियों व शूद्रों को भी यज्ञोपवीत धारण करने व वेद पढ़ने का अधिकार दिया था। स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा रचित सत्यार्थ प्रकाश नामक ग्रन्थ आर्य समाज का मूल ग्रन्थ है। आर्य समाज का आदर्श वाक्य हैरू कृण्वन्तो विश्वमार्यम्, जिसका अर्थ है – विश्व को आर्य बनाते चलो।

प्रसिद्ध आर्य समाजी जनों में स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी श्रद्धानन्द, महात्मा हंसराज, लाला लाजपत राय, भाई परमानन्द, पंडित गुरुदत्त, स्वामी आनन्दबोध सरस्वती, स्वामी अछूतानन्द, चौधरी चरण सिंह, पंडित वन्देमातरम रामचन्द्र राव, बाबा रामदेव आदि आते हैं।

सिद्धान्त

आर्य शब्द का अर्थ है श्रेष्ठ और प्रगतिशील। अतः आर्य समाज का अर्थ हुआ श्रेष्ठ और प्रगतिशीलों का समाज, जो वेदों के अनुकूल चलने का प्रयास करते हैं। दूसरों को उस पर चलने को प्रेरित करते हैं। आर्यसमाजियों के आदर्श मर्यादा पुरुषोत्तम राम और योगिराज कृष्ण हैं। महर्षि दयानंद ने उसी वेद मत को फिर से स्थापित करने के लिए आर्य समाज की नींव रखी। आर्य समाज के सब सिद्धांत और नियम वेदों पर आधारित हैं। आर्य समाज की मान्यताओं के अनुसार फलित ज्योतिष, जादू–टोना, जन्मपत्री, श्राद्ध, तर्पण, व्रत, भूत–प्रेत, देवी जागरण, मूर्ति पूजा और तीर्थ यात्रा मनगढ़ंत हैं, वेद विरुद्ध हैं। आर्य समाज सच्चे ईश्वर की पूजा करने को कहता है, यह ईश्वर वायु और आकाश की तरह सर्वव्यापी है, वह अवतार नहीं लेता, वह

सब मनुष्यों को उनके कर्मानुसार फल देता है, अगला जन्म देता है, उसका ध्यान घर में किसी भी एकांत में हो सकता है।

इसके अनुसार दैनिक यज्ञ करना हर आर्य का कर्त्तव्य है। परमाणुओं को न कोई बना सकता है, न उसके टुकड़े ही हो सकते हैं। यानी वह अनादि काल से हैं। उसी तरह एक परमात्मा और हम जीवात्माएं भी अनादि काल से हैं। परमात्मा परमाणुओं को गति दे कर सृष्टि रचता है। आत्माओं को कर्म करने के लिए प्रेरित करता है। फिर चार ऋषियों के मन में २०,३७८ वेदमंत्रों का अर्थ सहित ज्ञान और अपना परिचय देता है। सत्यार्थ प्रकाश आर्य समाज का मूल ग्रन्थ है। अन्य माननीय ग्रंथ हैं – वेद, उपनिषद, षड् दर्शन, गीता व वाल्मीकि रामायण इत्यादि। महर्षि दयानंद ने सत्यार्थ प्रकाश में इन सबका सार दे दिया है। १८ घंटे समाधि में रहने वाले योगिराज दयानंद ने लगभग आठ हजार किताबों का मंथन कर अद्‌भुत और क्रांतिकारी सत्यार्थ प्रकाश की रचना की।

मान्यताएँ

ईश्वर का सर्वोत्तम और निज नाम ओम् है। उसमें अनंत गुण होने के कारण उसके ब्रह्मा, महेश, विष्णु, गणेश, देवी, अग्नि, शनि वगैरह अनंत नाम हैं। इनकी अलग– अलग नामों से मूर्ति पूजा ठीक नहीं है। आर्य समाज वर्णव्यवस्था यानी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र को कर्म से मानता है, जन्म से नहीं। आर्य समाज स्वदेशी, स्वभाषा, स्वसंस्कृति और स्वधर्म का पोषाक है।

आर्य समाज सृष्टि की उत्पत्ति का समय चार अरब ३२ करोड़ वर्ष और इतना ही समय प्रलय काल का मानता है। योग से प्राप्त मुक्ति का समय वेदों के अनुसार ३१ नील १० खरब ४० अरब यानी एक परांत काल मानता है। आर्य समाज वसुधैव कुटुंबकम् को मानता है। लेकिन भूमंडलीकरण को देश, समाज और संस्कृति के लिए घातक मानता है। आर्य समाज वैदिक समाज रचना के निर्माण व आर्य चक्रवर्ती राज्य स्थापित करने के लिए प्रयासरत है। इससमाज में मांस, अंडे, बीड़ी, सिगरेट, शराब, चाय, मिर्च–मसाले वगैरह वेद विरुद्ध होते हैं।

आर्य समाज के दस नियम

१. सब सत्यविद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सबका आदिमूल परमेश्वर है।

२. ईश्वर सच्चिदानंदस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनंत, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वांतर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है, उसी की उपासना करने योग्य है।

३. वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढना – पढाना और सुनना – सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

४. सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोडने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।

५. सब काम धर्मानुसार, अर्थात सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहियें।

६. संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

७. सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार,यथायोग्य वर्तना चाहिये।

८. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।

६. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से संतुष्ट न रहना चाहिये, किंतु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये।

१०. सब मनुष्यों को सामाजिक, सर्वहितकारी, नियम पालने में परतंत्र रहना चाहिये और प्रत्येक हितकारी नियम पालने में स्वतंत्र रहें।

आर्यसमाज का योगदान

- आर्य समाज शिक्षा, समाज–सुधार एवं राष्ट्रीयता का आन्दोलन था। भारत के ८५ प्रतिशत स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, आर्य समाज ने पैदा किया। स्वदेशी आन्दोलन का मूल सूत्रधार आर्यसमाज ही है।
- स्वामी जी ने धर्म परिवर्तन कर चुके लोगों को पुनरू हिंदू बनने की प्रेरणा देकर शुद्धि आंदोलन चलाया।
- आज विदेशों तथा योग जगत में नमस्ते शब्द का प्रयोग बहुत साधारण बात है। एक जमाने में इसका प्रचलन नहीं था – हिन्दू लोग भी ऐसा नहीं करते थे। आर्यसमाजियो ने एक–दूसरे को अभिवादन करने का ये तरीका प्रचलित किया। ये अब भारतीयों की पहचान बन चुका है।
- स्वामी दयानन्द ने हिंदी भाषा में सत्यार्थ प्रकाश पुस्तक तथा अनेक वेदभाष्यों की रचना की। एक शिरोल नामक एक अंग्रेज ने तो सत्यार्थ प्रकाश को ब्रिटिश साम्राज्य की जड़ें खोखली करने वाला लिखा था।
- सन् १८८६ में लाहौर में स्वामी दयानंद के अनुयायी लाला हंसराज ने दयानंद एंग्लो वैदिक कॉलेज की स्थापना की थी।
- सन् १६०१ में स्वामी श्रद्धानन्द ने कांगड़ी में गुरुकुल विद्यालय की स्थापना की।

आर्य समाज और भारत का नवजागरण

आर्य समाज ने भारत में राष्ट्रवादी विचारधारा को आगे बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण योगदान किया है। इसके अनुयायियों ने भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में बढ–चढ कर भाग लिया। आर्य समाज के प्रभाव से ही भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के भीतर स्वदेशी आन्दोलन आरम्भ हुआ था। स्वामीजी आधुनिक भारत के धार्मिक नेताओं में प्रथम महापुरूष थे जिन्होने श्स्वराज्यश शब्द का प्रयोग किया। आर्य समाज ने हिन्दू धर्म में एक नयी चेतना का आरंभ किया था। स्वतंत्रता पूर्व काल में हिंदू समाज के नवजागरण और पुनरुत्थान आंदोलन के रूप में आर्य समाज सर्वाधिक शक्तिशाली आंदोलन था। यह पूरे पश्चिम और उत्तर भारत में सक्रिय था तथा सुप्त हिन्दू जाति को जागृत करने में संलग्न था। यहाँ तक कि आर्य समाजी प्रचारक फिजी, मारीशस, गयाना, ट्रिनिडाड, दक्षिण अफ्रीका में भी हिंदुओं को संगठित करने के उद्देश्य से पहुँच रहे थे। आर्य समाजियों ने सबसे बड़ा कार्य जाति व्यवस्था को तोड़ने और सभी हिन्दुओं में समानता का भाव जागृत करने का किया।

समाज सुधार

भारत को जिस तरह ब्रिटिश सरकार का आर्थिक उपनिवेश और बाद में राजनीतिक उपनिवेश बना दिया गया था, उसके विरूद्ध भारतीयों की ओर से तीव्र प्रतिक्रिया होना स्वाभाविक था। चूंकि भारत धीरे–धीरे पश्चिमी विचारों की ओर बढ़ने लगा था, अतः प्रतिक्रिया सामाजिक क्षेत्र से आना स्वाभाविक कार्य थी। यह

प्रतिक्रिया १९वीं शताब्दी में उठ खड़े हुए सामाजिक सुधार आन्दोलनों के रूप में सामने आई। ऐसे ही समाज सुधार आंदोलनों में आर्यसमाज का नाम आता है। आर्यसमाज ने विदेशी जुआ उतार फेंकने के लिए, समाज में स्वयं आंतरिक सुधार करके अपना कार्य किया। इसने आधुनिक भारत में प्रारंभ हुए पुर्नजागरण को नई दिशा दी। साथ ही भारतीयों में भारतीयता को अपनाने, प्राचीन संस्कृति को मौलिक रूप में स्वीकार करने, पश्चिमी प्रभाव को विशुद्ध भारतीयता यानी वेदों की ओर लोटो के नारे के साथ समाप्त करने तथा सभी भारतीयों को एकताबद्ध करने के लिए प्रेरित किया।

१९वीं शताब्दी में भारत में समाज सुधार के आंदोलनों में आर्यसमाज अग्रणी था। हरिजनों के उद्धार में सबसे पहला कदम आर्यसमाज ने उठाया, लड़कियों की शिक्षा की जरूरत सबसे पहले उसने समझी। वर्ण व्यवस्था को जन्मगत न मानकर कर्मगत सिद्ध करने का सेहरा उसके सिर है। जातिभेद भाव और खानपान के छूतछात और चौके–चूल्हे की बाधाओं को मिटाने का गौरव उसी को प्राप्त है। अंधविश्वास और धर्म के नाम पर किये जाने वाले हजारों अनाचारों कब्र उसी ने खोदी।

१८७५ में स्थापना के शीघ्र बाद ही इसकी प्रसिद्धि तत्कालीन समाज विचारकों, आचार्यों, समाज सुधारकों आदि को प्रभावित करने में सफल हुई, और कुछ वर्षों बाद ही आर्यसमाज की संपूर्ण भारत के प्रमुख शहरों में शाखायें स्थापित हो गई। स्वामीजी के विद्वतापूर्ण व्याख्यानों तथा चमत्कारिक व्यक्तित्व ने युवाओं को आर्यसमाज की ओर मोड़ा। अन्य समकालीन सामाजिक धार्मिक आंदोलनों की अपेक्षा आर्यसमाज सही अर्थ में अधिक राष्ट्रवादी था। यह भारत में पनप रहे पश्चिमीकरण के विरूद्ध अधिक आक्रमणकारी स्वभाव रखने वाला आंदोलन था।

आर्य समाज ने अपनी स्थापना से ही सामाजिक कुरीतियों के विरूद्ध आन्दोलन का शंखनाद किया, जैसे– जातिवादी जड़मूलक समाज को तोड़ना, महिलाओं के लिए समानाधिकार, बालविवाह का उन्मूलन, विधवा विवाह का समर्थन, निम्न जातियों को सामाजिक अधिकार प्राप्त होना आदि। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज की स्थापना के पीछे उपरोक्त सामाजिक नवजागरण को मुख्य आधार बनाया। उनका विश्वास था कि नवीन प्रबुद्ध भारत में, नवजागृत होते समाज में, नये भारत का निर्माण करना है तो समाज को बन्धनमुक्त करना प्रथम कार्य होना चाहिए। स्वयं ब्राह्मण होते हुए भी स्वामी जी ने ब्राह्मणों की सत्ता के खण्डन का प्रतिपादन किया और धार्मिक अंधविश्वास व कर्मकाण्डों की तीव्र भर्त्सना की। अल्पकाल में ही वे भारत के समाज सुधार के क्षेत्र में नवीन ज्ञान–ज्योति के रूप में उदयीमान हुए। इसमें उन्होनें पाया कि भारतीय युवा पाश्चात्य अनुकरण पर जोर दे रहा है। अतः उन्होनें पाश्चात्य संस्कृति पर शक्तिशाली प्रहार किया और भारतीय गौरव को सदैव ऊंचा किया।

सामान्यतः स्वामीजी ने भारतीय समाज तथा हिन्दूधर्म में प्रचालित दोषों को उजागर करने के साथ ही आंचलिक पंथों और अन्य धर्मो की भी आलोचना की। पुरोहितवाद पर करारा प्रहार करते हुए स्वामीजी ने माना था कि स्वार्थी और अज्ञानी पुरोहितों ने पुराणों जैसे ग्रंथो का सहारा लेकर हिन्दू धर्म का भ्रष्ट किया है। स्वामी जी धर्म सुधारक के रूप में मूर्तिपूजा, कर्मकाण्ड, पुराणपंथी, तन्त्रवाद के घोर विरोधी थे। इसके लिए उन्होने वेदों का सहारा लेकर विभिन्न दृष्टांत किए। इससे इन्होने सुसुप्त भारतीय जनमानस को चेतन्य करने का अदभुत प्रयास किया। स्वामी जी ने हिन्दुओं को हीन, पतित और कायर होने के भाव से मुक्त किया और उनमें उत्कट आत्मविश्वास जागृत किया। फलस्वरूप समाज पश्चिम की मानसिक दासता के विरुद्ध दृढ़ आत्मविश्वास तथा संकल्प के साथ विद्रोह कर सके। इन्ही क्रांतीकारी विचारों के कारण वेलेंटाइन शिरोल ने स्वामीजी को 'इण्डियन अरनेस्ट' कहा।

शिक्षा का प्रसार

स्वामी दयानन्द के मूलमन्त्र था कि जनता का विकास और प्रगति सुनिश्चित करने और उनके अस्तित्व की रक्षा करने का सर्वोत्तम साधन शिक्षा है। इसी मन्त्र को गाँठ में बाँध कर आर्यसमाज ने कार्य किया। आर्यसमाज ने इस तथ्य को आत्मसात कर लिया था कि शिक्षा की जड़ें राष्ट्रीय भावना और परम्परा में गहरी जमी होनी चाहिये। हम एक प्राचीन और श्रेष्ठ परम्परा के उत्तराधिकारी हैं। हमारी शिक्षा में भारतीय नीतिशास्त्र और दर्शन को सर्वोपरि स्थान प्राप्त होगा। शिक्षा के क्षेत्र में गुरुकुल व डीएवी कालेज स्थापित कर शिक्षा जगत में आर्यसमाज ने अग्रणी भूमिका निभाई। स्त्रीशिक्षा में आर्यसमाज का उल्लेखनीय योगदान रहा। 1885 के प्रारम्भ तक आर्यसमाज की अमृतसर शाखा ने दो महिला विद्यालयों की स्थापना की घोषणा की थी तथा तीसरा कटरा डुला में प्रस्तावित था। 1880 के दौरान लाहौर आर्यसमाज महिला शिक्षा के क्षेत्र में अग्रणी बना हुआ था। 1889 ई0 में फिरोजपुर आर्यसमाज ने एक कन्या विद्यालय स्थापित किया था।

हिन्दी–सेवा

आर्य समाज से जुडे लोग भारत की स्वतन्त्रता के साथ–साथ भारत की संस्कृति, भाषा, धर्म, शिक्षा आदि के क्षेत्र में सक्रिय रूप से जुडे रहे। स्वामी दयानन्द की मातृभाषा गुजराती थी और उनका संस्कृत का ज्ञान बहुत अच्छा था, किन्तु केशव चन्द्र सेन के सलाह पर उन्होने सत्यार्थ प्रकाश की रचना हिन्दी में की। दयानंद ने सत्यार्थ प्रकाश जैसा क्रांतिकारी ग्रंथ हिंदी में रचकर हिंदी को एक प्रतिष्ठा दी। आर्यसमाज ने हिन्दी को 'अर्यभाषा' कहा और सभी आर्यसमाजियों के लिये इसका ज्ञान आवश्यक बताया। दयानन्द जी वेदों का की व्याख्या संस्कृत के साथ–साथ हिन्दी में भी की। स्वामी श्रद्धानन्द ने हानि उठाकर भी अनेक पत्र–पत्रिकाओं का प्रकाशन देवनागरी लिपि में लिखी हिन्दी में किया जबकि उनका प्रकाशन पहले उर्दू में होता था।

किन्तु पंजाब में पंजाबी भाषा के प्रति आर्यसमाज का रविया नकारात्मक रहा और आर्य समाज ने पंजाबी के लिए प्रचार किया कि यह पंजाबी हिन्दुओं की मातृभाषा नहीं है जबकि पंजाब में सैकडों वर्षों से न केवल हिन्दू पंजाबी बोलते रहे हैं बल्कि पंजाबी साहित्य, सिनेमा में शानदार योगदान देते रहे हैं। पंजाबी में अन्य भारतीय भाषाओं की तरह संस्कृत से व्युत्पन्न शब्द पाए जाते हैं, जबकि आर्य समाज ने मिथ्या प्रचार ने अपूरणीय क्षति की है

आर्य धर्म और संस्कृति

आर्य शब्द का अर्थ है प्रगतिशील। आर्य धर्म प्राचीन आर्यों का धर्म और श्रेष्ठ धर्म दोनों समझे जाते हैं। प्राचीन आर्यों के धर्म में प्रथमतरू प्राकृतिक देवमण्डल की कल्पना है जो भारत, में पाई जाती रही है। इसके बाद पहले के युग में भारत में कुछ आर्या लोग बाहर से आये थे। जैसे ईरान, यूनान, रोम, जर्मनी आदि में आज भी आर्यन्स के वंसज पाए जाते हैं। इसमें द्यौस् (आकाश) और पृथ्वी के बीच में अनेक देवताओं की सृष्टि हुई है। भारतीय आर्यों का मूल धर्म ऋग्वेद में अभिव्यक्त है, ईरान में बसे आर्य अवेस्ता में, यूनानियों का उलिसीज और ईलियद में। देवमंडल के साथ आर्य कर्मकांड का विकास हुआ जिसमें मंत्र, यज्ञ, श्राद्ध (पितरों की पूजा), अतिथि सत्कार आदि मुख्यतरू सम्मिलित थे। आर्य आध्यात्मिक दर्शन (ब्राह्, आत्मा, विश्व, मोक्ष आदि) और आर्य नीति (सामान्य, विशेष आदि) का विकास भी समानांतर हुआ। शुद्ध नैतिक आधार पर अवलंबित परंपरा विरोधी अवैदिक संप्रदायों–बौद्ध, जैन आदि–ने भी अपने धर्म को आर्य धर्म अथवा सद्धर्म कहा।

सामाजिक अर्थ में 'आर्य' का प्रयोग पहले संपूर्ण मानव के अर्थ में होता था। कभी–कभी इसका प्रयोग सामान्य जनता विश के लिए ('अर्य' शब्द से) होता था। फिर अभिजात और श्रमिक वर्ग में अंतर दिखाने के लिए आर्य वर्ण और शूद्र वर्ण का प्रयोग होने लगा। फिर आर्यों ने अपनी सामाजिक व्यवस्था का आधार वर्ण को बनाया और समाज चार वर्णों में वृत्ति और श्रम के आधार पर विभक्त हुआ। ऋक्संहिता में चारों वर्णों की उत्पत्ति और कार्य का उल्लेख इस प्रकार हैः–

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः।

ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पदभ्यां शूद्रोऽजायत ||10||90 |22||

(इस विराट् पुरुष के मुंह से ब्राह्मण, बाहु से राजस्व (क्षत्रिय), ऊरु (जंघा) से वैश्य और पद (चरण) से शूद्र उत्पन्न हुआ।)

यह एक अलंकारिक वाक्य हे। ब्रह्म तो अनंत हे। उस ब्रह्म के सद विचार, सद प्रवृत्तियां आस्तिकता जिस जनसमुदाय से अभिव्यक्त होती हे उसे ब्राहमण कहा गया हे। शोर्य और तेज जिस जन समुदाय से अभिव्यक्त होता है` वह क्षत्रिय वर्ग और इनके अतिरिक्त संसार को चलने के लिए आवश्यक क्रियाए जेसे कृषि वाणिज्य ब्रह्म वैश्य भाग से अभिव्यक्त होती है। इसके अतिरिक्त भी अनेक इसे कार्य बच जाते हे जिनकी मानव जीवन में महत्ता बहुत अधिक होती हे जेसे दस्तकारी, शिल्प, वस्त्र निर्माण, सेवा क्षेत्र ब्रह्म अपने शुद्र वर्ग द्वारा अभिव्यक्त करता हे।

आजकल की भाषा में ये वर्ग बौद्धिक, प्रशासकीय, व्यावसायिक तथा श्रमिक थे। मूल में इनमें तरलता थी। एक ही परिवार में कई वर्ण के लोग रहते और परस्पर विवाहादि संबंध और भोजन, पान आदि होते थे। क्रमशरू ये वर्ग परस्पर वर्जनशील होते गए। ये सामाजिक विभाजन आर्यपरिवार की प्रायरू सभी शाखाओं में पाए जाते हैं, यद्यपि इनके नामों और सामाजिक स्थिति में देशगत भेद मिलते हैं।

प्रारंभिक आर्य परिवार पितृसत्तात्मक था, यद्यपि आदित्य (अदिति से उत्पन्न), दैत्य (दिति से उत्पन्न) आदि शब्दों में मातृसत्ता की ध्वनि वर्तमान है। दंपती की कल्पना में पति पत्नी का गृहस्थी के ऊपर समान अधिकार पाया जाता है। परिवार में पुत्रजन्म की कामना की जाती थी। दायित्व के कारण कन्या का जन्म परिवार को गंभीर बना देता था, किंतु उसकी उपेक्षा नहीं की जाती थी। घोषा, लोपामुद्रा, अपाला, विश्ववारा आदि स्त्रियां मंत्रद्रष्टा ऋषिपद को प्राप्त हुई थीं। विवाह प्रायरू युवावस्था में होता था। पति पत्नी को परस्पर निर्वाचन का अधिकार था। विवाह धार्मिक कृत्यों के साथ संपन्न होता था, जो परवर्ती ब्राह्ह विवाह से मिलता जुलता था।

प्रारंभिक आर्य संस्कृति में विद्या, साहित्य और कला का ऊँचा स्थान है। भारोपीय भाषा ज्ञान के सशक्त माध्यम के रूप में विकसित हुई। इसमें काव्य, धर्म, दर्शन आदि विभिन्न शास्त्रों का उदय हुआ। आर्यों का प्राचीनतम साहित्य वेद भाषा, काव्य और चिंतन, सभी दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। ऋग्वेद में ब्राह्चर्य और शिक्षणपद्धति के उल्लेख पाए जाते हैं, जिनसे पता लगता है कि शिक्षणव्यवस्था का संगठन आरंभ हो गया था और मानव अभिव्यक्तियों ने शास्त्रीय रूप धारण करना शुरू कर दिया था। ऋग्वेद में कवि को ऋषि (मंत्रद्रष्टा) माना गया है। वह अपनी अंतदृष्टि से संपूर्ण विश्व का दर्शन करता था। उषा, सवितृ, अरण्यानी

आदि के सूक्तों में प्रकृतिनिरीक्षण और मानव की सौंदर्यप्रियता तथा रसानुभूति का सुंदर चित्रण है। ऋग्वेदसंहिता में पुर और ग्राम आदि के उल्लेख भी पाए जाते हैं। लोहे के नगर, पत्थर की सैकड़ों पुरियां, सहरुद्वार तथा सहरुस्तंभ अट्टालिकाएं निर्मित होती थीं। साथ ही सामान्य गृह और कुटीर भी बनते थे। भवननिर्माण में इष्टका (ईंट) का उपयोग होता था। यातायात के लिए पथों का निर्माण और यान के रूप में कई प्रकार के रथों का उपयोग किया जाता था। गीत, नृत्य और वादित्र का संगीत के रूप में प्रयोग होता था। वाण, क्षोणी, कर्करि प्रभृति वाद्यों के नाम पाए जाते हैं। पुत्रिका (पुत्तलिका, पुतली) के नृत्य का भी उल्लेख मिलता है। अलंकरण की प्रथा विकसित थी। स्त्रियां निष्क, अज्जि, बासी, वक, रुक्म आदि गहने पहनती थीं। विविध प्रकार के मनोविनोद में काव्य, संगीत, द्यूत, घुड़दौड़, रथदौड़ आदि सम्मिलित थे।

आर्य और आर्य समाज

आज के युग में आर्यों से भिन्न एक गुट की स्थापना दयानन्द सरस्वती जी के द्वारा हुई है। उनका कार्य है भारत को वेदों की ओर लौटाना। वे ईश्वर के अद्वैत तथा अजन्मा सत्ता को स्वीकारकर कृष्णादि के ईश्वरत्व को न मानते हुए उन्हें महापुरुष की संज्ञा देते हैं तथा पौराणिक तथ्यों को पूर्णतया नकारते हैं। हालांकि महर्षि दयानन्द जी के युग में ही उनके द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत यथा पुराण कल्पना तथा अवैदिक हैं, का खण्डन हो चुका है। अतः यहाँ से आर्यों के मत का दो भाग हो गया। एक जो पुराण तथा वेद और ईश्वर के साकार निराकार दोनो सत्ताओं को मानने वाले तथा दूसरे केवल वेद और निराकार सत्ता को मानने वाले।

श्रेष्ठ, शिष्ट अथवा संज्जन

नैतिक अर्थ में 'आर्य' का प्रयोग महाकुल, कुलीन, सभ्य, सज्जन, साधु आदि के लिए पाया जाता है। (महाकुलकुलीनार्यसभ्यसज्जनसाधवः।—अमरकोष 7। 3)। सायणाचार्य ने अपने ऋग्भाष्य में ष्आर्यश का अर्थ विज्ञ, यज्ञ का अनुष्ठाता, विज्ञ स्तोता, विद्वान् आदरणीय अथवा सर्वत्र गंतव्य, उत्तमवर्ण, मनु, कर्मयुक्त और कर्मानुष्ठान से श्रेष्ठ आदि किया है। आदरणीय के अर्थ में तो संस्कृत साहित्य में आर्य का बहुत प्रयोग हुआ है। पत्नी पति को आर्यपुत्र कहती थी। पितामह को आर्य (हिन्दी – आजा) और पितामही को आर्या (हिंदी – आजी, ऐया, अइया) कहने की प्रथा रही है। नैतिक रूप से प्रकृत आचरण करनेवाले को आर्य कहा गया हैः

कर्तव्यमाचनरन् कार्यमकर्तव्यमनाचरन्।

तिष्ठति प्रकृताचारे स आर्य इति उच्यते॥

प्रारंभ में 'आर्य' का प्रयोग प्रजाति अथवा वर्ण के अर्थ में भले ही होता रहा हो, आगे चलकर भारतीय इतिहास में इसका नैतिक अर्थ ही अधिक प्रचलित हुआ जिसके अनुसार किसी भी वर्ण अथवा जाति का व्यक्ति अपनी श्रेष्ठता अथवा सज्जनता के कारण आर्य कहा जाने लगा।

आर्यों की आदिभूमि

आर्य प्रजाति की आदिभूमि के संबंध में अभी तक विद्वानों में बहुत मतभेद हैं। भाषावैज्ञानिक अध्ययन के प्रारंभ में प्रायरू भाषा और प्रजाति को अभिन्न मानकर एकोद्भव (मोनोजेनिक) सिद्धांत का प्रतिपादन हुआ और माना गया कि भारोपीय भाषाओं के बोलनेवाले के पूर्वज कहीं एक ही स्थान में रहते थे और वहीं से

विभिन्न देशों में गए। भाषावैज्ञानिक साक्ष्यों की अपूर्णता और अनिश्चितता के कारण यह आदिभूमि कभी मध्य एशिया, कभी पामीर–कश्मीर, रही है। जबकि भारत से बाहर गए आर्यन के निशान कभी आस्ट्रिया–हंगरी, कभी जर्मनी, कभी स्वीडन–नार्वे और आज दक्षिण रूस के घास के मैदानों में ढूँढ़ी जाती है। भाषा और प्रजाति अनिवार्य रूप से अभिन्न नहीं। आज आर्यों की विविध शाखाओं के बहूद्भव (पॉलिजेनिक) होने का सिद्धांत भी प्रचलित होता जा रहा है जिसके अनुसार यह आवश्यक नहीं कि आर्य–भाषा–परिवार की सभी जातियाँ एक ही मानववंश की रही हों। भाषा का ग्रहण तो संपर्क और प्रभाव से भी होता आया है, कई जातियों ने तो अपनी मूल भाषा छोड़कर विजातीय भाषा को पूर्णतरू अपना लिया है। जहां तक भारतीय आर्यों के उद्गम का प्रश्न है, भारतीय साहित्य में उनके बाहर से आने के संबंध में एक भी उल्लेख नहीं है। कुछ लोगों ने परंपरा और अनुश्रुति के अनुसार मध्यदेश (स्थूण) (स्थाण्वीश्वर) तथा कजंगल (राजमहल की पहाड़ियां) और हिमालय तथा विंध्य के बीच का प्रदेश अथवा आर्यावर्त (उत्तर भारत) ही आर्यों की आदिभूमि माना है। पौराणिक परंपरा से विच्छिन्न केवल ऋग्वेद के आधार पर कुछ विद्वानों ने सप्तसिंधु (सीमांत, उत्तर भारत एवं पंजाब) को आर्यों की आदिभूमि माना है। लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने ऋग्वेद में वर्णित दीर्घ अहोरात्र, प्रलंबित उषा आदि के आधार पर आर्यों की मूलभूमि को ध्रुवप्रदेश में माना था। बहुत से यूरोपीय विद्वान् और उनके अनुयायी भारतीय विद्वान् अब भी भारतीय आर्यों को बाहर से आया हुआ मानते हैं।

अब आर्यों के भारत के बाहर से आने का सिद्धान्त (AIT) गलत सिद्ध कर दिया गया है। ऐसा माना जाता है कि इस सिद्धान्त का प्रतिपादन करके अंग्रेज और यूरोपीय लोग भारतीयों में यह भावना भरना चाहते थे कि भारतीय लोग पहले से ही गुलाम हैं। इसके अतिरिक्त अंग्रेज इसके द्वारा उत्तर भारतीयों (आर्यों) तथा दक्षिण भारतीयों (द्रविड़ों) में फूट डालना चाहते थे। इसी श्रंखला में अंग्रेजों ने शूद्रों को दक्षिण अफ्रीका से अपनी निजी सेवा व् चाटुकारिता के लिए एवं भारत में आर्यों से युद्ध करने के लिए अपनी सैनिक टुकडियां बनाने हेतु लाया गया बताया है ! जबकि वास्तव में शुद्र वो लोग थे जो अर्धनग्न अवस्था में जंगलों में अशिक्षित व् पशुओं जैसा जीवन व्यतीत करते थे!

अरविन्द जी के विचार

आर्य लोग जगत के सनातन स्थापना के जानकर थे उनके अनुसार प्रेम शक्ति सत् के विकास के लिए सर्व्यापी नारायण या ईश्वर स्थावर–जंगम मनुष्य–पशु किट–पतंग साधू–पापी शत्रु–मित्र तथा देवता और असुर में प्रकट होकर लीला कर रहे हैं। अरविन्द घोष के अनुसार अर्यालोग मित्र कि रक्षा करते और शत्रु का नाश करते किन्तु उसमे उनकी आसक्ति नहीं थी। वे सर्वत्र सब प्राणियों में सब वस्तुओं में कर्मो में फल में इश्वर को देखा कर ईष्ट अनिष्ट शत्रु मित्र सुख दुःख सिद्धि असिद्धि में समबाभाव रखते थे। इस समभाव का परिणाम यह नहीं था कि सब कुछ इनके लिए सुखदायि और सब कर्म उनके करने योग्य थे।

बिना सम्पूर्ण योग के द्वंद्व मिटता नहीं हे और यह अवस्था बहुत कम लोगो को प्राप्त होती है, किन्तु आर्य शिक्षा साधारण आर्यों कि सम्पति हे द्य आर्य इष्ट साधन और अनिष्ट को हटाने में सचेत रहते थे, किन्तु इष्ट साधन से विजय के मद में चूर नहीं होते थे और अनिष्ट समपादन में डरते भी न थे। मित्र कि सहायता और शत्रु कि पराजय उनकी चेष्टा होती थी लेकिन शत्रु से द्वेष और मित्र का अन्याय भी सहन नहीं करते थे। आर्य लोग तो कर्त्तव्य के अनुरोध से स्वजनो का संहार भी करते थे और विपक्षियों कि प्राण रक्षा के लिए युद्ध भी करते थे। वे पाप को हठाने वाले और पुण्य को संचय करने वाले थे लेकिन पुन्य कर्म में गर्वित और पाप में पतित होने पर रोते नहीं थे वरन शारीर शुद्धि करके आत्म उन्नति में सचेष्ट होजाते

थे। आर्य लोग कर्म कि सिद्धि के लिए विपुल प्रयास करते थे, हजारों बार विफल होने पर भी वीरत नहीं होते थे किन्तु असिद्धि में दुखित होना उनके लिए अधर्म था।

आर्य–आक्रमण के सिद्धांत में समय के साथ परिवर्तन

आर्य आक्रमण का सिद्धांत अपने आराम्भिक दिनों से ही लगातार परिवर्तित होते रहा है। आर्य–आक्रमण के सिद्धांत कि अधुनित्तम परिकल्पन के अनुसार यह कोइ जाति विशेष नहीं थी अपितु यह केवल एक सम्मानजनक शब्द था जो कि आन्ल्भाषा के SIR के समनर्थाक था। आर्यो के आक्रमन की कल्पान के समर्थन के सभी तथ्य भ्रमक सिद्ध हो चुके है।

विश्वर में आर्य समाज का प्रचार एवं आर्य संस्कृति परम्पराएं

आर्य संस्कृति परम्पराओ, मर्यादाओ, मूल्यों, समानता, विश्व बंधुत्व पर आधारित विश्व की सबसे प्राचीन अरबो वर्ष पुरानी है। यदपि अंग्रेजो ने इसका पूरा इतिहास गलत पढ़ा कर यह बताने की कोशिश की की आर्य लोग बाहर से आये थे और यहाँ के द्रविड़ो को भगा दिया.क्या करोडो वर्ष पूर्व भगवन राम भी बाहर से आये थे? अंग्रेजो के आने से पहले हमारा राष्ट्र एक विकसित देश था नहीं तो बाहर के लोग यहाँ आक्रमण करके राज्य न करते। हमारे यहां गुरुकुल की शिक्षा होती थी। औरतों का पूरा सम्मान दिया जाता पुरी स्वंतंत्रता थी परन्तु उनकी शालीनता और मर्यादा का ध्यान रखा जाता था। सनातन धर्म इसका अटूट अंग है। ये किसी एक ग्रन्थ या मनुष्य के नाम पर नहीं परन्तु असंख्य ऋषी मुनिओ द्वारा तपस्या और योग साधना से इस संस्कृति के उत्थान में योगदान किया। इसकी पहचान वेदों, १८ महापुरानो, रामायण, महाभारत, गीता, गंगा, गायत्री, गौ माता, भगवान राम और कृष्णजी और अनेक पवित्र ग्रंथो से है जो संस्कृत में लिखे हैं इसीलिए विदेशो के बहुत से विश्वविद्यालयों में संस्कृत में पढाई और रिसर्च होती है हमारे ऋषिओं ने हमारे त्योहारों को सामाजिक समरसता के लिए आयोजित किये और कुम्भ मेले तो सबसे बड़ी उदहारण है। इतना बड़ा मेला विश्व में कही नहीं होता, समय–समय पर संस्कृति और धर्म के खिलाफ कार्य करने वाले दुष्ट पैदा होते रहे और उनको खतम करने और रक्षा के लिए महापुरुष जन्म लेते रहे और कई बार भगवानजी खुद ही अवतरित हो पृथ्वी में आते है। हमने सबसे मिलकर रहने और मानवता से प्रेम और विश्व बंधुत्व का आचरण अपनाया। न तो हमने किसी देश पर आक्रमण किया न धर्म परिवर्तन का दवाब बनाया। हम बहुत ही स्वतंत्र तरह की मान्यता रखते हैं इसीलिए कोई एक भगवन को ही नहीं मानते। शादी में दहेज के लिए कोई दवाब नहीं था न ही जबरदस्ती सती की परंपरा थी या लडकियो को अपमानित या मॉरने की।

देश में मुस्लिम आक्रमणकारी आये उन्होंने लूटा, बहुतो को मारा या धर्म परिवर्तन करवाया और राज्य भी किया परन्तु हमारी संस्कृति पर ज्यादा असर नहीं पड़ा परंटी पर्दा प्रथा जरूर आ गयी। हमारे बहुत से मंदिरों को तोड़ डाला गया और उसकी जगह मस्जिदें बना ली गयी और अमूल्य धन सम्पदा लूट ले गए। उनके प्रभाव से कुछ रहन सहन के साथ उर्दू की शुरुहात हुई। सबसे ज्यादा नुक्सान अंग्रेजो ने किया जिन्होंने हमारी शिक्षा निति को समाप्त करके अपनी शिक्षा हम लोगो पर ठोकी और हमारे इतिहास को गलत पढ़ा कर हमारे मानसिक सोच को बदल दिया। हमको बताया गुआ की हमारे पूर्वज बन्दर थे और बाहर से आये थे। हम लोग अनपढ़ और गंवार थे और अंग्रेजो ने हमें शिक्षित किया.इसके अलावा उन्होंने अपने स्कूल खोले और अपनी अंग्रेजी सभ्यता में रंग दिया। इसके अलावा ईसाई मिशनरीयो ने धर्म परिवर्तन का कार्य पैसे के लालच दे कर गरीबो, गाँव के लोगो और आदिवाशी क्षेत्रो में करते रहे। हमारे राजाओं, देशवाशियो और सोख गुरुओ ने इनके खिलाफ युद्ध करके बहुत बलिदान समय समय पर किया।

जहाँ मुसलमानों ने हिंसा के बल पर कार्य किया अंग्रेजो ने चालाकी, और आपस में लड़वाने की नीति अपनाई जिससे वे ज्यादा सफल हुए। उन्होंने हमारे इतिहास को बदल कर हमारे महापुरषों के बारे में गालर पढ़ा कर हमारे दिमाग को दूषित कर दिया।

आजादी के बाद उम्मीद थी की हमारे नेता गुलामी के सारे निशान खतम कर देंगे परन्तु आज भी सडको, भवनों, शहरो के नाम नहीं बदले गए, न ही नहीं शिक्षा नीति बनाई गयी न यी इतिहास को बदल कर टीक रक्खा गया। हमारे उन मंदिरों की जगह की मस्जिदों हटाया नहीं गया न ही तोड़े गए मंदिरों को बनाया गया केवल सोमनाथजी मंदिर को छोड़ कर नेहरूजी की मुस्लिम तुष्टिकरण की नीति से ऐसा हुआ यान तक की देश को अपना नाम और भाषा भी मिल सकी।

कांग्रेस के सेकुलरिज्म ने आर्य संस्कृति का सबसे बढ़ा नुक्सान किया,हमारी संस्कृत पर समय समय पर आक्रमण होते रहे परन्तु महापुरशो का समाया समाया पर आकर रक्षा का सिलसिला चलता रहा। आज ईसाई मिशनरी बहुत बड़ी संख्या में आदिवासी, गरीबो और गाँव में रह कर धर्मान्तरण करने में लगे हैं इसके लिए पैसा विदेशो से आता है। ओडिशा, और नार्थ ईस्ट प्रदेशो में इनकी बहुताहत है। इसके अलावा यह लोग हमारे धर्म ग्रन्थ और भगवान और देवी देवताओं के बारे में अनर्गल बाते कर के लोगो को भड़काते हैं। आजादी के बाद अब व्यक्ति की स्वंतत्रता के नाम पर बहुत से बुद्धिजीवी और कुछ संस्थाए केवल हिन्दुओ के धर्म ग्रंथो, देवी देवताओ और भगवानजी के बारे में उल्टी सीधी बाते करते रहते हैं.परन्तु इसकी रक्षा करने के लिए रास्ट्रीय स्वयंसेवक संघ,विश्व हिब्दु परिषद् और कई संगठन और हमारे आध्यात्मिक गुरु लगे रहते हैं.कांग्रेस ने देश के इतिहास के लिखने की जिम्मेदारी घोर हिदु विरोधी वाम पंथी लेखों को देकर इतिहास को गलत ढंग से पढने के लिए मजबूर कर दिया.सेकुलरिज्म और लोकतंत्र के नाम से हिन्दुओ के साथ अन्याय हो रहा है..हमारे देश के साधू संतो ने बहुत से संगठन बना कर आर्य संस्कृत में अपने योगदान करना शुरू कर दिया.हमारे ये धर्मगुरु देश और विदेशो में जा कर सनातन धर्म और आर्य संस्कृति के प्रचार में लगे हैं और विभिन्न पत्रिकाओ द्वारा इसाईओ के गलत कार्यो को उगागर करते है और अपने धर्म के बारे में प्रवचन करते हैं.जबसे टीवी केबल शुरू हो गए कई अध्यात्मिक चौनल्स केवल धरम और संस्कृत का प्रचार २४ घंटे देश विधेशो में कर रहे हैं जिनसे लोगो में जागृत पैदा हो गयी है.आधुनिक तकनीकी का भी पूरा फायदा उठा रहे हैं.सबसे पहले आस्था चौनल ने १४ साल पहले शुरुहात की थी परन्तु अब तो बहुत हो गए हैं.इधर १४ सालो से स्वामी रामदेवजी और बल्क्रिश्नाजी ने योग और आयुर्वेद की क्रांति करके पुरे विश्व में डंका बजा रखा है.और लाखो लोगो को इसका फायदा मिल रहा है.गायत्री परिवार भी अपना कार्य कर रहा है.देश विधेशो में सनातन धर्म और आर्य संस्कृत की अलख जग रही और लोगो को इसके बारे में पता चल रहा है.यदपि कुछ लोग इसके नाम पर गलत कार्य कर रहे को जिसको रोक पाना बहुत मुस्दि्कल है.इसके अलावा ये गुरु और संस्थाएं आदि वासी और पिछड़े क्षेत्रो में शिक्षा, स्वास्थ्य,और दूसरी तरह की सेवाओ में बहुत कार्य कर रहे हैं.प्राकर्तिक आपदाओं में भी ये लोग और संस्थाए बहुत उच्च कोटि का कार्य कर रहे हैं.ईसाई मिशनरीबहुत नाराज है और इसकी कीमत कभी कभी हमारे गुरुओ को देनी पड़ती है.पहले कृपालुजी महाराज, फिर जयंती सरस्वती के खिलाफ विभिन्न आरोप लगे और फिर लाखो लोगो का जीवन परिवर्तन करने वाले बापू आसारामजी को बलात्कार के झोटे केस में फंसा कर पिछले १५ महीने से जेल में बंद कर दिया है.क्योंकि वे ईसाई मिशनरी के साजिश में फसाये गए क्योंकि वे उनके गलत कार्यो को उगागर कर रहे थे.सनसनी खबर के लालच में टीवी चौनल्स और मीडिया हिन्दु विरोधी खबरों को खीब उचलता है.कभी भी मौल्वियो, उलेमाओ या ईसाई फादर के खिलाफ कुछ

नहीं दिखया या लिखा जाता.कोई में मुहम्मद या इस्लाम के खिलाफ या बाइबिल और क्राइस्ट के खिलाफ क्यों नहीं लिखता ?अब समय आ गया है की हिन्दुओ को एक हो कर गलत कार्यो के खिलाफ एकजुट हो कर विरोध करना चौये.सोनिया गाँधी ने हमरे धर्म और संस्कृति का बहुत नुक्सान किया,याद होगा की पिछली सरकार ने ही सर्वोच्च न्यायालय में हलफनामा देकर कहा था की भगवन राम या राम सेतु के कोई प्रमाण नहीं हैं यह करोडो हिन्दुओ की भावना का अनादर है जिसका फल मिल गया.

विदेशों में इस्कान (ISCKON) ने विश्व के बहुत देशो में मंदिरों द्वारा गीता और धर्म का खूब प्रचार किया। इसके अलावा स्वामी नाथजी के भी मंदिर हैं। स्वामी विवेकानंदजी ने विदेशों में हमारी कीर्ती फैलाई। बहुत से भारतीय गुरों ने बहुत योगदान दिया और बहुत से विदेशीओ को इस धर्म और संस्कृति की तरफ आकर्षित किया।

सनातन धर्म और आर्य संस्कृति एक समुद्र के सामान है और जितनी भी नदिया गिरे या पानी लिया जाये कोई फर्क नहीं होता। इसकी रक्षा करना और प्रसारित करना हर एक सच्चे हिन्दू का कर्तव्य है!

'शिकागो अमेरिका के विश्व धर्म सम्मेलन में वैदिक धर्म का डंका बजाने वाले आर्य विद्वान पंडित अयोध्या प्रसाद'

'शिकागो अमेरिका के विश्व धर्म सम्मेलन में वैदिक धर्म का डंका बजाने वाले आर्य विद्वान पंडित अयोध्या प्रसाद' –मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून। वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून के ग्रीष्मोत्सव में यमुनानगर निवासी प्रसिद्ध आर्य विद्वान श्री इन्द्रजित् देव पधारे हुए थे। हमारी उनसे कुछ विषयों पर चर्चा हुई। स्वामी विवेकानन्द का विषय उपस्थित होने पर उन्होंने हमें पंडित अयोध्या प्रसाद वैदिक मिशनरी जी पर एक लेख लिखने की प्रेरणा की। उसी का परिणाम यह लेख है। हमारी चर्चा के मध्य यह तथ्य सामने आया कि स्वामी विवेकानन्द जी का शिकागो पहुंचने, वहां विश्व धर्म संसद में व्याख्यान देने और उनके अनुयायियों द्वारा उनका व्यापक प्रचार करने का ही परिणाम है कि वह आज देश विदेश में लोकप्रिय हैं। आजकल प्रचार का युग है। जिसका प्रचार होगा उसी को लोग जानते हैं और जिसका प्रचार नहीं होगा वह महत्वपूर्ण होकर भी अस्तित्वहीन बन जाता है। स्वामी विवेकानन्द जी को अत्यधिक प्रचार मिलने के कारण वह प्रसिद्ध हुए और ऋषि दयानन्द भक्त पंडित अयोध्या प्रसाद जी को विश्व धर्म सभा और अमेरिका में प्रचार करने पर भी तथा उनके अनुयायियों द्वारा उनके कार्यों के प्रचार की उपेक्षा करने से वह इतिहास के पन्नों से किनारे कर दिए गये। अतः यह लेख पं. अयोध्या प्रसाद, वैदिक मिशनरी को स्मरण करने का हमारा एक लघु प्रयास है। पण्डित अयोध्या प्रसाद कौन थे और उनके कार्य और व्यक्तित्व कैसा था? इन प्रश्नों का कुछ उत्तर इस लेख के माध्यम से प्रस्तुत करने का प्रयास करते हैं। पंडित अयोध्या प्रसाद एक अद्भुत वाग्मी, दार्शनिक विद्वान, चिन्तक व मनीषी होने के साथ शिकागो के विश्व धर्म सम्मेलन सहित कुछ अन्य देशों में वैदिक धर्म का प्रचार करने वाले प्रमुख आर्य विद्वानों में से एक थे। आपका जन्म 16 मार्च सन् 1888 को बिहार राज्य के गया जिले में नवादा तहसील के एक ग्राम 'अमावा' में हुआ था। आपके पिता बंशीधर लाल जी तथा माता श्रीमती गणेशकुमारी जी थी। आपके दो भाई और एक बहिन थी। पिता रांची के डिप्टी कमीश्नर के कार्यालय में एक बैंच टाइपिस्ट थे। आप अंग्रेजी, उर्दू, अरबी व फारसी के अच्छे विद्वान थे। कहा जाता है कि बंशीधर लाल जी को अंग्रेजी का वेब्स्टर शब्द कोश पूरा याद था। बचपन में पं. अयोध्या प्रसाद कुछ तांत्रिकों के सम्पर्क में आये जिसका परिणाम यह हुआ कि तन्त्र में आपकी रूचि हो गई और यह उन्माद यहां तक बढ़ा कि आप श्मशान भूमि में रहकर तन्त्र साधना करने लगे। आपकी इस रूचि व कार्य से आपके माता–पिता व परिवार जनों को घोर निराशा हुई। उन्होंने इन्हें इस कुमार्ग से हटाने

के प्रयास लिए जो सफल रहे। बालक की शिक्षा के लिए पिता ने एक मौलवी को नियुक्त किया जो अयोध्या प्रसाद जी को उर्दू, अरबी व फारसी का अध्ययन कराते थे। कुशाग्र बुद्धि होने के कारण इन भाषाओं पर आपका अधिकार हो गया और आप इन भाषाओं में बातचीत करने के साथ भाषण भी देने लगे। इन भाषाओं के संस्कार के कारण अयोध्या प्रसाद जी स्वधर्म से कुछ दूर हो गये और इस्लाम मत के नजदीक आ गये। महर्षि दयानन्द ने भी कहा है कि जो मनुष्य जिस भाषा को पढ़ता है उस पर उसी भाषा का संस्कार होता है। वैदिक धर्म की निकटता संस्कृत व हिन्दी के अध्ययन से ही हो सकती है, अन्यथा यह कठिन कार्य है। आपने उर्दू, फारसी व अरबी आदि भाषाओं का ज्ञान प्राप्त कर 'गनीमत' उपनाम से इन भाषाओं में काव्य रचनायें करने लगे। आपका विवाह प्रचलित प्रथा के अनुसार 16 वर्ष की अल्प आयु में समीपवर्ती ग्राम लौहर दग्गा निवासी श्री गिरिवरधारी लाल की पुत्री किशोरी देवी जी के साथ सन् 1904 में सम्पन्न हुआ था। यह देवी विवाह के समय केवल साढ़े नौ वर्ष की थी। पंडित अयोध्या प्रसाद जी ने अपने मित्र पं. रमाकान्त शास्त्री को अपने आर्यसमाजी बनने की कहानी बताते हुए कहा था कि उनका परिवार इस्लाम व ईसाईयत के विचारों से प्रभावित था। इसके परिणामस्वरूप मेरे पिता ने मुझे एक आलिम फाजिल मौलवी के मकतब में उर्दू और फारसी पढ़ने के लिए भरती किया था। एक दिन मेरे मामाजी ने कहा कि अजुध्या आज कल तुम क्या पढ़ रहे हो? अयोध्या प्रसाद जी ने मौलवी साहब की बड़ाई करते हुए इस्लाम की खूबियां बताईं। इसके साथ ही उन्होंने अपने मामा जी को हिन्दू धर्म की खराबियां भी बताईं जो शायद उन्हें मौलवी साहब ने बताईं होंगी या फिर उन्होंने स्वयं अनुभव की होंगी। पंडित जी के मामाजी कट्टर आर्यसमाजी विचारों को मानने वाले थे। मामा जी ने अयोध्या प्रसाद को महर्षि दयानन्द का लिखा हुआ सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ दिया और कहा कि यदि तुमने इस पुस्तक को पढ़ा होता तो तुम हिन्दू धर्म में खराबियां न देखते और अन्य मतों में अच्छाईयां तुम्हें प्रतीत न होती। अपने मामाजी की प्रेरणा से अयोध्याप्रसाद जी ने सत्यार्थ प्रकाश पढ़ना आरम्भ कर दिया। पहले उन्होंने चौदहवां समुल्लास पढ़ा जिसमें इस्लाम मत की मान्यताओं पर समीक्षा प्रस्तुत की गई है। उसके बाद तेरहवां समुल्लास पढ़कर ईसाई मत का आपको ज्ञान हुआ। आपने अपने अध्यापक मौलवी साहब से इस्लाम मत पर प्रश्न करने आरम्भ कर दिये। पंडित जी के प्रश्न सुनकर मौलवी साहब चकराये। इस प्रकार पंडित अयोध्या प्रसाद को आर्यसमाज और इसके प्रवर्तक महर्षि दयानन्द का परिचय मिला और वह आर्यसमाजी बनें। महर्षि दयानन्द के भक्त पं. लेखराम की पुस्तक 'हिज्जूतुल इस्लाम' को पढ़कर आपको कुरआन पढ़ने की प्रेरणा मिली और वह विभिन्न मतों के अध्ययन में अग्रसर हुए। पंडित जी ने सन् 1908 में प्रवेशिका परीक्षा उत्तीर्ण की। आगे की शिक्षा के लिए आपने हजारीबाग के सेंट कोलम्बस कालेज में प्रवेश लिया। यहां आप क्रान्तिकारियों के सम्पर्क में आ गये और देश को आजादी दिलाने की गतिविधियों में सक्रिय हुए। पिता ने इन्हें हजारीबाग से हटाकर भागलपुर भेज दिया जहां रहकर आपने इण्टरमीडिएट की परीक्षा सन् 1911 में उत्तीर्ण की। आपकी क्रान्तिकारी गतिविधियों से पिता रूष्ट थे। उन्होंने आपको अध्ययन व जीविकार्थ धन देना बन्द कर दिया। ऐसे समय में रांची के प्रसिद्ध आर्यनेता श्री बालकृष्ण सहाय ने पिता व पुत्र के बीच समझौता कराने का प्रयास किया। श्री बालकृष्ण सहाय की प्रेरणा से ही पंडित अयोध्याप्रसाद जी ने पटना के एक धुरन्धर संस्कृत विद्वान महामहोपाध्याय पडित रामावतार शर्मा से सस्कृत भाषा व हिन्दू धर्म के ग्रन्थों का गहन अध्ययन किया। संस्कृत ज्ञान व शास्त्र नैपुण्य के लिए आप अपने विद्या गुरु महामहोपाध्याय जी का कृतज्ञतापूर्वक स्मरण किया करते थे। पटना से संस्कृत एवं हिन्दू ग्रन्थों का अध्ययन कर आप सन् 1911 में कलकत्ता पहुंचे और हिन्दू होस्टल में रहने लगे। यहीं पर पंजाब के प्रसिद्ध नेता डा. गोकुल चन्द नारंग एवं बाबू राजेन्द्र प्रसाद आदि छात्रावस्था में रहते थे। बाद में बाबू राजेन्द्र प्रसाद भारतीय राजनीति के शिखर पद पर पहुंचें। अयोध्याप्रसाद जी ने पहले तो प्रेसीडेन्सी कालेज में प्रवेश लिया और कुछ समय बाद सिटी कालेज में भर्ती हुए। यहां रहते हुए आपने इतिहास, दर्शन

और धर्मतत्व का तुलनात्मक अध्ययन जैसे विषयों का गहन अवगाहन किया। वह अपने अध्ययन की पिपासा को दूर करने के लिए अन्य अनेक मतों के पुस्तकालयों में जाकर उनके साहित्य का अध्ययन करते थे और अपनी पसन्द का विक्रीत साहित्य भी क्रय करते थे। कलकत्ता में बिहार के छात्रों ने 'बिहार छात्रसंघ' नामक संस्था का गठन किया जिसका अध्यक्ष बाबू राजेन्द्र प्रसाद जी को तथा मंत्री अयोध्या प्रसाद जी को बनाया गया। सन् 1915 में आपने बी.ए. उत्तीर्ण कर लिया। इसके बाद एम.ए. व विधि अथवा ला की परीक्षाओं का पूर्वार्द्ध भी उत्तीर्ण किया। इन्हीं दिनों आप कलकत्ता के आर्यसमाज के निकट सम्पर्क में आयें और यहां आपके नियमित रूप से व्याख्यान होने लगे। आपने यहां आर्यसमाज के पुरोहित एवं उपदेशक का दायित्व भी संभाल लिया। आपकी वाग्मिता, तार्किकता, आपके स्वाध्याय एवं शास्त्रार्थ कौशल से यहां के सभी आर्यगण प्रभावित होने लगे। स्वाध्याय की रूचि का यह परिणाम हुआ कि आपने बौद्ध, ईसाई और इस्लाम मत का विस्तृत व व्यापक अध्ययन किया। देश को आजादी दिलाने के लिए सन् 1920 में आरम्भ हुए असहयोग आन्दोलन में आपने सक्रिय भाग लिया। इसी साल कालेज स्कवायर में सत्यार्थ प्रकाश के छठे समुल्लास में प्रतिपादित राजधर्म पर भाषण करते हुए आप पुलिस द्वारा पकड़े गये और अदालत ने आपको डेढ़ वर्ष के कारावास का दण्ड सुनाया। आपने यह सजा अलीपुर के केन्द्रीय कारागार में पूरी की। जेल से रिहा होकर आप एक विद्यालय के मुख्याध्यापक बन गये। पडित अयोध्या प्रसाद जी की यह इच्छा थी कि वह विदेशों में वैदिक धर्म का प्रचार करें। इस्लामिक देशों में जाकर वैदिक धर्म का प्रचार करने की भी उनकी तीव्र इच्छा थी। सन् 1933 में शिकागो में आयोजित विश्व धर्म सम्मेलन के अवसर पर उनकी विदेशों में जाकर धर्मप्रचार की इच्छा को पूर्ण करने का अवसर मिला। आर्यसमाज कलकत्ता और मुम्बई के आर्यो के प्रयासों से पं. अयोध्या प्रसाद जी को शिकागो के अन्तर्राष्ट्रीय धर्म सम्मेलन में वैदिक धर्म के प्रतिनिधि के रूप में भेजा गया। प्रसिद्ध उद्योगपति एवं सेठ युगल किशोर बिड़ला जी ने पंडित जी के शिकागो जाने में आर्थिक सहायता प्रदान की। जुलाई, 1933 में उन्होंने अमेरिका के लिए प्रस्थान किया। विश्व धर्म सम्मेलन में उनके व्याख्यान का विषय 'वैदिक धर्म का गौरव एवं विश्व शान्ति' था। आपने इस विषय पर विश्व धर्म संसद, शिकागो में प्रभावशाली भाषण दिया। वैदिक धर्म संसार का प्राचीनतम एवं ज्ञानदृविज्ञान सम्मत धर्म है व कालावधि की दृष्टि से यह सबसे अधिक समय से चला आ रहा है। वेद की शिक्षायें सार्वजनीन एवं सार्वभौमिक होने से वैदिक धर्म का गौरव सबसे अधिक है। विश्व में शान्ति की स्थापना वैदिक ज्ञान व शिक्षाओं के अनुकरण व अनुसरण से ही हो सकती है। इस विषय का पं. अयोध्या प्रसाद जी ने विश्व धर्म सभा में अनेक तर्कों व युक्तियों से प्रतिपादन किया। पंडित जी का विश्व धर्म सभा में यह प्रभाव हुआ कि वहां सभा की कार्यवाही का आरम्भ वेदों के प्रार्थना मन्त्रों से होता था और समापन शान्तिपाठ से होता था। यह पण्डित अयोध्या प्रसाद जी की बहुत बड़ी उपलब्धि थी जिसकी इस कृतघ्न देश और आर्यसमाज में बहुत कम चर्चा हुई। इसी विश्व धर्म सभा में पंडित जी ने वैदिक व भारतीय अभिवादन ''नमस्ते" शब्द की बड़ी सुन्दर व प्रभावशाली व्याख्या की। उन्होंने कहा कि भारत के आर्य लोग दोनों हाथ जोड़कर तथा अपने दोनों हाथों को अपने हृदय के निकट लाकर नत मस्तक हो अर्थात् सिर झुकाकर ''नमस्ते" शब्द का उच्चारण करते हैं। इन क्रियाओं का अभिप्राय यह है कि नमस्ते के द्वारा हम अपने हृदय, हाथ तथा मस्तिष्क तीनों की प्रवृत्तियों का संयोजन करते हैं। हृदय आत्मिक शक्ति का प्रतीक है, हाथ शारीरिक बल का द्योतक हैं तथा मस्तिष्क मानसिक व बौद्धक शक्तियों का स्थान वा केन्द्र है। इस प्रकार नमस्ते के उच्चारण तथा इसके साथ सिर झुका कर व दोनों हाथों को जोड़कर उन्हें हृदय के समीप रखकर हम कहते हैं कि "…With all the physical force in my arms] with all mental force in my head and with all the love in my heart, I pay respect to the soul with in you." नमस्ते की इस व्याख्या का सम्मेलन के पश्चिमी विद्वानों पर अद्भुत व गहरा प्रभाव पड़ा। पण्डित जी ने इस यात्रा

में उत्तरी व दक्षिणी अमेरिका में वैदिक धर्म का प्रशंसनीय प्रचार किया। यहां प्रचार कर पण्डित जी ने गायना और ट्रिनिडाड में जाकर वैदिक धर्म की दुन्दुभि बजाई। ट्रिनीडाड में एक कट्टर सनातनी व पौराणिक व्यक्ति ने पण्डित अयोध्या प्रसाद जी को भोजन पर आमंत्रित किया। यह व्यक्ति अपनी अज्ञानता के कारण पण्डित जी को आर्यसमाज का विद्वान, प्रखर वाग्मी और उपदेशक होने के कारण उन्हें सनातन धर्म का विरोधी समझ बैठा और उसने पण्डित जी को भोजन में विष दे दिया। यद्यपि पण्डित जी भोजन का पहला ग्रास जिह्वा पर रखकर ही इसमें विषैला पदार्थ होने की सम्भावना को जान गये, उन्होंने शेष भोजन का त्याग भी किया परन्तु इस एक ग्रास ने ही पंडित जी के स्वास्थ्य व जीवन को बहुत हानि पहुंचाई। वह ट्रिनीडाड से लन्दन आये। विष का प्रभाव उनके शरीर पर था। उन्हें यहां अस्पताल में 6 माह तक भर्ती रहकर चिकित्सा करानी पड़ी। उनको दिए गये इस विष का प्रभाव जीवन भर उनके स्वास्थ्य पर रहा। लन्दन से पंडित जी भारत आये और कलकत्ता को ही अपनी कर्मभूमि बनाया। आपके जीवन का शेष समय आर्यसमाज के धर्म प्रचार सहित स्वाध्याय, चिन्तन व मनन में व्यतीत हुआ। पण्डित जी के पास लगभग 25 हजार बहुमूल्य व दुर्लभ ग्रन्थों का संग्रह था। उन्होंने मृत्यु से पूर्व उसे महर्षि दयानन्द स्मृति न्यास टंकारा को भेंट कर दिया। अनुमान है कि उस समय उनके इन सभी ग्रन्थों का मूल्य दो लाख के लगभग रहा होगा। पंडित अयोध्या प्रसाद जी के अन्तिम दिन सुखद नहीं रहे। दुर्बल स्वास्थ्य और हृदय रोग से पीड़ित वह वर्षों तक कलकत्ता के 85 बहु बाजार स्थित निवास स्थान पर दुःख वा कष्ट भोगते रहे। 11 मार्च सन् 1965 को 77 वर्ष की आयु में वर्षों से शारीरिक दुःख भोगते हुए आपने नाशवान देह का त्याग किया। आपकी पत्नी का देहान्त आपकी मृत्यु से कुछ वर्ष पूर्व ही हो गया था।

मैक्समूलर, संस्कृत के प्रकांड विद्वान, जिन्होंने शायद सबसे पहले वेदों का परिचय यूरोप को करवाया.एक बार मैक्समूलर हिंदुत्व के ऊपर यूरोप में कहीं व्याख्यान दे रहे थे। अब हिंदू दर्शन तो है ही उच्चतम स्तर का, तो एक बिशप ने उनसे प्रश्न किया कि जब हिंदू दर्शन इतना उच्च कोटि का है तो हिंदू अन्य देशों में इसका प्रचार क्यों नहीं करते? मैक्समूलर का उत्तर अद्भुत था पाश्चात्य लोगों के लिए. उन्होंने कहा कि हिंदू धर्म को अपनी माँ समझते हैं और माँ का प्रचार करना उन्हें सही नहीं लगता है, हम देखते हैं कि अब्राहमिक रिलीजंस के दर्शन हिंदू दर्शन के सामने दो कौड़ी से ज्यादा महत्त्व के नहीं हैं लेकिन उनका प्रचार प्रसार ज्यादा हुआ हैए आखिर क्यों ?

मैक्समूलर का उत्तर सही था.वैसे भी हमारी परंपरा रही है कि हम अपनी प्रशंसा स्वयं नहीं करना चाहते हैं. वेदों की ऋचाओं के द्रष्टा ऋषियों ने अपने नाम का उल्लेख तक नहीं किया है.हमारे इतिहास में भी हम देखते हैं कि किसी ने भी अपनी आत्मकथा नहीं लिखी है.आत्म विमुग्ध होना हम उचित नहीं समझते हैं. लेकिन अब समय बदल गया है.सत्य के नाम पर असत्य परोसा जा रहा है.हिंदू दर्शन के संबंध में लोगों को पता नहीं चल पा रहा है,जिसके चलते निम्न स्तर के तत्वज्ञान से लोग प्रभावित हो रहे हैं। हाँ यह बात सही है कि हिंदू दर्शन उच्च कोटि का है और उसे समझने के लिए मेधा की आवश्यकता होती है। कम मेधा वालों के लिए हिंदुत्व को समझना कठिन होता है.जो सत्य को सीधे सीधे देखना चाहते हैं,वो अनायास ही हिंदुत्व की ओर आकर्षित हो जाते हैं,लेकिन जो खोजी वृत्ति के नहीं हैं,कूपमंडूकता से ग्रस्त हैं, क्या उनके लिए कोई उपाय नहीं है? उनके लिए भी उपाय हैं, उन्हें योग इत्यादि से परिचित कराना होगा, भगवान बुद्ध ने यही तो किया। उन्होंने लोगों को "ध्यान" से परिचित कराया.ध्यान के बाद लोग धर्म के प्रति उत्सुक हुए.आज भी जो लोग हिंदुत्व का स्वीकार कर रहे हैं उसका कारण अध्यात्म ही है, विदेशों में जो लोग हिंदुत्व के प्रति उत्सुक हो रहे हैं, उनमे ज्यादातर योग–ध्यान के माध्यम से ही हो रहे हैं.हालाँकि

इस्कॉन के द्वारा धर्म का सीधे सीधे भी प्रसार हो रहा है ,लेकिन उन्हें हिंदुओं का आवश्यक सपोर्ट नहीं मिल पा रहा है। एक सुखद बात यह है कि इस्कॉन के माध्यम से धर्म प्रचार करने वाले अधिकतर जन्मना हिंदू नहीं हैं, लेकिन उनका कार्य गौरवास्पद है। इसी तरह आवश्यकता है और संस्थाएं लोक कल्याण हेतु धर्म प्रचार के क्षेत्र में आगे आयें.जिस हिंदुत्व ने हमलोगों को इतनी स्वतंत्रता दी है, क्या अन्य लोगों को भी यह स्वतंत्रता उपभोगने का अवसर नहीं मिलना चाहिये?

निश्चय ही हर मानव तक इस श्रेष्ठ धर्म का दर्शन पहुँचाने की आवश्यकता है.अन्य लोगों को भी सत्पथ पर लाना धर्म का ही अंग है.हिंदुओं को दोतरफा काम करना होगा.एक तरफ हमें सत्य के नाम पर जो असत्य का प्रचार हो रहा है उसकी असलियत लोगों तक पहुंचानी होगी.दूसरी तरफ लोगों को सत्य मार्ग पर चलने के लिए प्रोत्साहित करना होगा.यह सही है कि हिंदुत्व को समझना हर किसी के लिए संभव नहीं है, लेकिन हमारा कर्तव्य है कि जो लोग भटके हुए हैं उन तक सही मार्ग की जानकारी पहुंचाएं. जिस दिन सारा विश्व हिंदुत्व को समझने लगेगा,मानने लगेगा, उसी दिन ऋषियों का स्वप्न –"कुर्वन्तु विश्वम आर्यम" पूर्ण होगा। और यह होगा, इसे कोई रोक नहीं सकता है।

सन्दर्भ

1. आधुनिक भारत का रहस्य

2. आधुनिक भारत का रहस्य

3. स्वामी दयानंद और आर्यसमाज की हिंदी भाषा को देन